आक्टोबर १९४४

वार्षिक मूल्य ३)
एक प्रति ।)

पत्र व्यवहार का पता
प्रेमलता देवी संचालिका "दीदी"
इलाहाबाद

×

विषय सूची
आक्टोबर, सन १९४४

महात्मा गांधी की ७५वीं वर्ष गांठ के अवसर पर पूज्य पण्डित मदनमोहन मालवीय ने उन्हें बधाई का यह संदेश भेजा है:—प्यारे भाई गाँधी जी,

आपकी ७५वीं वर्ष गांठ के अवसर पर मैं आपको बधाई देता हूँ। मैं सर्व-शक्तिमान परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि वह आपकी इच्छाओं को पूर्ण करे और आपको दीर्घजीवन प्राप्त हो ताकि आप स्वाधीन भारत को देख सकें।

भारतीय स्त्रियों और कन्याओं की सबसे अच्छी और सबसे सस्ती सचित्र मासिक पत्रिका
बिहार, बीकानेर, जोधपुर, कोटा, ग्वालियर, यू० पी० की सरकारों द्वारा कन्या-शालाओं के लिये स्वीकृत।

वर्ष ५ | इलाहाबाद, अक्टोबर १९४४ | संख्या १०

कवि क्या सुनाये

लेखिक, श्रीमती सावित्री दुलारे लाल एम० ए०

आज का कवि क्या सुनाए ?
मूक वाणी हो रही है, किस तरह यह गीत गाये ?
वाह्य हाहाकार से अंतर्जगत विचलित हुआ है;
वेदना में भी विषमता, फिर कहाँ से साम्य लाये ?
मर्म तल को छू रहे जो, भाव उठते और गिरते;
सब रसों की संधियाँ हैं, कौन को किससे निभाये ?
भूख से पीड़ित, तृषित, जर्जित तड़पकर लोग मरते;
कौन किसको दीन दुखिया देश में धीरज बँधाये ?
तीन तापों का समन्वय आज है संसार भर में;
सब तरह के रोग भारतवर्ष को भी घर बनाये ?
शस्यश्यामल भूमि में भी लोग दानों को तरसते;
कल अतिथि हो जो पधारे आज हैं आसन जमाये।
इस अँधेरी कोठरी के एक कोने में पड़ा कवि—
देशवालों की दशा पर नित नये आँसू बहाये।
एक कहता है–'मरो, फिर भी अहिंसा पर अड़ो तुम;
प्रेम-गढ़ में दृढ़ रहो, जिससे चतुर्दिक शांति छाये।'
दूसरा कहता–'लड़ो, रक्षा करो लड़ कर जगत की;'
क्या करे मानव, किसे अब मार्गदर्शक निज बनाये ?

प्रवासी के प्रति

श्रीमती शारदा देवी मिश्र (पारीक) बी० ए०

सुप्त है जब जगत सारा गगन में छिटके सितारे।
हे प्रवासी उठ रहे हैं भाव क्या मन में तुम्हारे।
याद स्वजनों की सताती क्या तुम्हें नीरव निशा में।
कल्पना देवी उड़ा ले जा रही है किस दिशा में।
हैं नहीं तब सन्निकट जब स्वजन सम्बन्धी सनेही।
शुभ तुम्हें हो विजय दशमी कह सका क्या आज कोई।
आ रही है शरद पूनों ले नया उल्लास सँग में।
चन्द्रमा बरसायगा जब सुधा सी सारे जगत में।
विरहिणी संतप्त होंगी विमल शीतल चाँदनी में,
याद कर कर प्रियतमों की भरेंगी आँसू दृगों में।
सच कहो तब हे प्रवासी हृदय में धर धीर भारी,
क्या न करदेगी विकल उस'खीर'की वह याद प्यारी
कृष्ण अर्पित रखी शीतल चाँदनी में थालियों में,
मिला करती थी कभी जो जननि द्वारा प्यालियों में।

—

स्त्री की पोषाक

लेखिका, "ऊर्मि"

दिसम्बर की 'दीदी' में कुमारी ज्ञानवती एम० ए० का पोशाक के सम्बन्ध में एक लेख निकला था। श्री श्रदावाल जी द्वारा उसका उत्तर तथा देवी जी का प्रत्युत्तर दोनों साथ ही मार्च के अङ्क में प्रकाशित हुये हैं।

कुमारी जी लिखती है—"पाउडर, क्रीम सुन्दर महीन वस्त्र, तड़क भड़क सब स्त्री के लिये जरूरी चीज़ें है।"

तड़क भड़क को अब तक संसार ओछी मनोवृति का ही परिचायक समझता आया है।

दूसरी वस्तु सुन्दर महीन वस्त्र हैं। जहाँ तक वस्त्रों के सुन्दर होने का प्रश्न है दो मत नहीं होंगे यद्यपि सुन्दरता के विषय में दृष्टिकोण भिन्न होंगे। पर महीन के बारे में यह निवेदन है कि अंगों का खुला रहना यदि स्वास्थ्य की दृष्टि से इतना आवश्यक है तो उन्हें पूर्ण रूप से अनावृत ही क्यों न रक्खा जाय? ऐसे वस्त्र का व्यवधान क्यों रक्खा जाय जिसमें से त्वचा झलके? क्यों न पुनः कंचुकी इत्यादि प्राचीन पहनावे का ही व्यवहार आरम्भ किया जाय? कृपया यह भी बतावें कि केवल साड़ी जम्पर ही महीन होंगे कि पेटीकोट इत्यादि अन्दर के कपड़े भी; क्योंकि इनके बारीक हुये बिना तो त्वचा न झलक सकेगी। हमारी इस नयी जरूरत को देखते हुये तो खद्दर जिसका कि महात्मा जी इतना गुण गाते हैं, हमारे किसी भी काम का नहीं।

अब, पाउडर क्रीम की बारी आती है। इनका व्यवहार हम कदाचित 'रूपसि' बनने के लिये करते हैं पर उनसे त्वचा को किसी भी प्रकार का यथार्थ लाभ होता हो, ऐसा कम से कम मैंने तो नहीं सुना, इसके विपरीत यदि मुझे बताने वाले या जहाँ से मैंने पढ़ा उसके लिखनेवाले मूर्ख या अनाड़ी न हों, तो सुना यह है कि इनके लेप से रोम-छिद्र बन्द हो जाते है जिससे वायु का प्रवेश और स्वेद का निकलना बन्द हो जाता है जो कि त्वचा के लिये हानिकर है।

पर नुकसान उठाते हुये भी हम इन प्रसाधनों के लिये निर्धन भारत का जिसकी आज का तो कहना ही क्या साधारण दिनों में भी आधी जनता एक समय खाकर जीवन यापन करती है, पर्याप्त धन विदेश भेज रही हैं। न जाने किस विचार से और तारीफ यह है कि हमारी विदुषी बहनें गर्व से कहती हैं कि ये वस्तुयें हमारे लिये जरूरी हैं।

दासत्व की यातना से पिसते देश के प्राणों में कराहने की शक्ति भी निःशेष हो रही है और हम रूप के मिथ्या परिष्कार में व्यस्त हैं। पुरुष की शोभा तो पुरुषार्थ प्रदर्शन में है और स्त्रीत्व का चरम विकास कदाचित रंगीन तितली बनने में। उस हीन परिवार की युवती कन्या को आप क्या कहेंगे जो अपने भूखे भाई बहनों की चिन्ता न रखते हुए परिवार के कठिन परिश्रम से उपार्जित अत्यल्प धन को अपने विलास के हेतु व्यय करे। क्षमा करें, देश के इस संकट काल में निरर्थक व्यसन के लिये धन का अपव्यय करके अपने कार्य्य तथा विचार दोनों ही के द्वारा देश का अपमान कर हमने स्वयं अपने मुख पर कालिख पोतने के सिवा और कुछ नहीं किया है। यह न कोई साज है न शृङ्गार, है केवल विचार हीनता का प्रतीक।

यह बातें यदि अनुचित एवं कटु हों तो क्षमा करें। सभी को अपना भिन्न दृष्टिकोण रखने का अधिकार है। जिन चीजों को देवी जी स्त्रियों के लिये आवश्यक मानती हैं बहुत सी स्त्रियाँ उन्हें अपने लिये अस्पृश्य समझती हैं और ऐसे बारीक वस्त्र को जिसमें से शरीर दीखे सभ्यता से गिरा हुआ तथा सादगी में ही शोभा है ऐसा उनका विचार है। भले ही ऐसी नारियों की संख्या अल्प हो या अन्य देवियाँ उन्हें बैकवर्ड या गँवार समझें।

तनिक विचार करने पर देवी जी स्वयं ही समझ जायेंगी कि टीम टाम के हेतु शृङ्गार की ओर ले जाने और चिता-रोहण के लिये शृङ्गार की ओर प्रेरित करनेवाली दो मनोवृतियों में आकाश पाताल का अन्तर है। शृङ्गार को तो

एक बार स्त्रियों के लिये आवश्यक कह भी सकते हैं पर तड़क भड़क को नहीं। वेश-विन्यास के विषय में हमारा आदर्श 'सादा और सुन्दर' होना चाहिये।

राम के पुरुषार्थ को भला कौन चुनौती दे सकता है, पर उस समय में जब नारी की गति केवल मकान के आंगन तक ही न थी वरन घर बाहर सर्वत्र समान थी, यह विचार किया जा सकता है कि स्त्रियाँ जब बाहर निकलती होंगी तो शृङ्गार को घर में न छोड़ आती होंगी। फिर उस समय में जब कि शृङ्गारमयी रमणी का बाहर निकलना कुछ विशेष बात न थी, यदि राम सीता को शृंगार युक्त बन ले गये तो कौन शेर मारा या समाज की मर्यादा के प्रतिकूल कुछ किया?

देवी जी कदाचित यह भूल जाती हैं कि सामाजिक सुशृङ्खला के उन दिनों में भी राम सीता को बन ले जाना खतरे से खाली नहीं समझते थे। सीता अपनी हठ से गयी थीं। इतने पर भी, यदि रावण रघुकुल के गौरव को अपमानित करने का साहस कर सका तो अवधेश राम उसका सिर भी न काटते तो और क्या करते।

दूसरी बात तपस्वी राम की सीता भी तपस्विनी ही बनने जा रही थीं। उन्होंने शृङ्गार को आवश्यक नहीं समझा था, राम स्वयं उन्हें बलकल पहनाने जा रहे थे। पर गुरुजनों के स्नेह प्रेरित आदेश से वह सहज शृङ्गार से युक्त ही बन गयीं।

इससे दो बातें और भी स्पष्ट हो जाती हैं। एक यह कि सीता ने यदि राम के साथ तपस्विनी बनना ही उचित समझा तो हम किस प्रकार अपने लिये विलास को आवश्यक प्रमाणित करते हुये युवकों का राष्ट्र के उत्थान के हेतु तपस्वी अथवा साधक बनने को आह्वान कर सकती हैं। हम विलासिनी बनेंगी तो पुरुष क्यों कर मनस्वी बन सकेंगे, आचरण से रहित हमारा कोरा उद्देश उन्हें कर्त्तव्य के प्रति जाग्रत नहीं कर सकता।

दूसरी बात, सीता जैसे थीं वैसे ही बन गईं। उन दिनों हमारी तरह बाहर निकलते समय बालों पर ब्रश और चेहरे पर पाउडर की पौलिश नहीं की जाती थी यानी उस समय के शृङ्गार आज कल की तरह दिखाऊ और क्षणिक न थे और किसी प्रकार की हानि का तो कोई प्रश्न ही न था।

राम के पुरुषार्थ के सम्बन्ध में एक बात और कहे बिना नहीं रहा जाता यद्यपि इस विषय से उसका लगाव नहीं है। राम की प्रियतमा सीता जिस दिन समाज द्वारा मिथ्या कलंक लगा कर लांछित और बर्बरता पूर्वक दण्डित की गईं उस दिन राम का पुरुषार्थ न जाने कहाँ पड़ा सो रहा था। जिस नारी के वे जीवन सहचर थे, जिसकी सम्पति विपत्ति में रक्षा करने और सुख दुख के भागी होने का वचन उन्होंने पंच परमेश्वर के सामने दिया था उसकी पवित्र मर्यादा का न तो वह मिथ्या कलंक से उद्धार कर सके, न अनुचित दण्ड भोगने में ही साथ दिया। मेरा अभिप्राय केवल इतना ही है कि नारी के सम्बन्ध में पुरुष ने सदा समाज की आज्ञा को मान्य समझा है। कभी भी किसी पुरुष ने नारी विषयक किसी बात को लेकर समाज के विरुद्ध पुरुषार्थ प्रदर्शन नहीं किया है। नारी के प्रति समाज के अन्याय का भी उसने सम्मान किया है, अपने शत्रुओं या व्यक्तिगत विरोधियों के लिये चाहे वह कितना ही प्रचण्ड विक्रम हो।

दो शब्द भाई अग्रवाल जी से भी—आज आप स्त्रियों पर पाउडर क्रीम लगा कर पैसा विदेश भेजने और कमर पतली करने के उत्साह में खाना न खाने, स्वास्थ्य खोने का आरोप कर रहे हैं। है तो बात ठीक पर जरा यह भी विचार करें कि क्या स्त्रियों के इस अशोभनीय कृत्य का कुछ उत्तरदायित्व आप लोगों पर भी है? उन्हें विदेशी प्रसाधनों को अपनाने के लिये किसने प्रोत्साहित किया।

अब से कुछ दिन पहले और आज भी यह आप लोगों की उत्कट इच्छा रहती थी और है कि आपकी पत्नी सेन्ट लवेन्डर से बसी, पाउडर क्रीम, से लक दक, शृङ्गार के पाश्चात्य उपकरणों से भली भाँति भूषित कृत्रिम सुन्दरी बनी सोसाइटी तथा आपके मित्रों के नेत्रों में चकाचौंध उत्पन्न किया करे। आपने भूल कर भी नहीं सोचा कि अप टू डेट पत्नी देश के लिये बड़ी मँहगी सिद्ध होती है। वह शौक अब शायद सिर दर्द साबित हो रहा है। यह बात और है कि कुछ युवक इस शृङ्गार को निस्सार एवं अग्राह्य समझते हों पर अधिकांश की मनोवृति तो उपरोक्त ही होती है।

अज्ञान के कारण भारतीय नारी शृङ्गार के स्वदेशी

साधनों को जो स्थायी लाभ पहुँचाने वाले होते थे भूल गई थी। आपने कभी उन्हें इनका ज्ञान कराने एवं इनके व्यवहार की ओर प्रेरित करने की चेष्टा की? व्यायाम, प्राणायाम, उचित आहार विहार द्वारा उन्हें स्वस्थ्य एवं यथार्थ सुन्दरी बनने को उत्साहित किया? वस्तुतः आप स्वयं भी सौन्दर्य के इच्छुक न थे। आप तो चाहते थे एक चमकीली नाजुक सी पुतली जो आपके ड्राइंगरूम की शोभा बढ़ाती, सिनेमा, क्लब, पार्टीज इत्यादि में जिसकी भड़कीली वेष-भूषा सहज ही आधुनिकता की धाक जमा सकती। देवियों ने यही बनना आरम्भ किया। शारीरिक सौन्दर्य को वस्तुतः परिमार्जित करना तो कठिन साधना थी यह नुस्खा सहज था। पौलिश की, चमक आ गई, फीकी पड़ने लगी तो फिर पौलिश कर ली। अब धन विदेश जाता है तो जाय भारत को तो कदाचित खुदा ने ही विदेशियों के लिये रिजर्व करा दिया है। हम कहाँ तक सर खपायें।

यह बात आप भी मानेंगे कि कम से कम भारत में स्त्रियाँ आज भी पुरुषों के ही इंगत पर उनकी इच्छाओं को कार्य रूप में परिणित करती हुई चलती हैं। भले ही वह अपनी स्वतन्त्रता के तराने अलापें।

दूसरी बात यह है कि व्यर्थ टीम टाम के उपकरणों पर जो धन विदेश जाता है वह क्या सारा स्त्रियों ही की बदौलत जाता है अथवा पुरुष-वर्ग भी कुछ ऐसी अनुपयोगी वस्तुओं का व्यवहार कर देश की निर्धनता बढ़ाने में भाग लेता है। पहले अपनी ओर देख कर तब दूसरों की आलोचना करना ठीक है।

शरद ऋतु

(कालिदास के ऋतुसंहार से)

काँस के फूल दुकूल, खिले
अरविन्दन में मुख-सुन्दरताई
बोलनि मत्त मरालन की
कल नूपुर केरि करै समताई
सोहत धान पकेन की पाँति
सोई पतरे तन की सुघराई
या विधि रूप सिँगार किये
ऋतु सर्द नई दुलही सम आई

—श्रीधर पाठक

राष्ट्र माता कस्तूर बा — लेखक, श्री विश्वम्भर प्रसाद शर्मा। भूमिका लेखक, श्री कमलनयन बजाज प्रकाशक नवयुग प्रकाशन, धन्तोली नागपूर। मूल्य १॥) पृष्ठ १२८

बा की मृत्यु के बाद उनके सम्बन्ध में कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। यह हमें उन सबसे सुन्दर प्रतीत हुई। इस पुस्तक में माता कस्तू बा की जीवन गाथा संक्षेप में बहुत ही सुन्दर ढङ्ग से दी गई है।

जीवन-संग्राम—लेखक, श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति, प्रकाशक, विजय पुस्तक भण्डार देहली। मूल्य १) पृष्ठ संख्या १०६।

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति हिन्दी के श्रेष्ठ विचार शील लेखक हैं। सामयिक विषयों पर उनके लेख पढ़ने लायक होते हैं। इस पुस्तक में उन्होंने 'युद्ध का मर्म' बहुत ही सुन्दर ढङ्ग से समझाया है। इसके सम्बन्ध में भारतीय दृष्टि कोण क्या होना चाहिए यह भी स्पष्ट किया है। उनकी शैली रोचक और प्रमाण अकाट्य हैं।

आदर्श महिला—पं० चन्दाबाई—लेखक, पं० परमानन्द जैन शास्त्री, प्रकाशिका, महिला भूषण पं० ब्रजबाला देवी, जैन बाला विश्राम धर्म कुञ्ज, धनुपुरा, आरा। मूल्य १॥।) पृष्ठ संख्या २८३। पुस्तक सजिल्द है।

पं० चन्दाबाई का नाम हम वर्षों से सुनते आ रहे हैं। आरा का जैन बाला विश्राम उन्हीं के स्वप्न का एक प्रत्यक्ष रूप है। वे बाल्यवस्था में ही विधवा हो गई थीं। परन्तु अपना जीवन उन्होंने समाज की सेवा में अर्पित करके उसे सार्थक बनाया है। वे हिन्दी की एक सुलेखिका हैं। और भाषण देने में भी उनकी प्रतिभा अद्भुत है। प्रस्तुत पुस्तक में उनका जीवन-चरित्र विस्तार के साथ अंकित किया गया है; जिसको पढ़ने से उनके प्रति मस्तक श्रद्धा से झुक जाता है और मन में त्याग और सेवा के सच्चे भाव उदय होते हैं।

—श्रीनाथसिंह

एक सच्ची ऐतिहासिक कहानी

विदा

लेखिक, रानी लक्ष्मीकुमारी चूँड़ावत रावतसर

कृष्णगढ़ के राजा के दो पुत्रियें थीं। बड़ी चारूमती अतीव सुन्दरी एवं सुशिक्षिता राजकुमारी थी। उसके सौन्दर्य की प्रशंसा फैलती जा रही थी। पहुँचते पहुँचते शाहनशाह आलमगीर के कानों तक पहुँच गई। उसने विचारा कि ऐसी सुन्दरी को तो उसे प्राप्त करना ही चाहिए। जैसी तारीफ फैल रही है वाकई में वैसी है या नहीं इसका इत्मीनान कर लेना बेहतर समझा।

उस दिन आगरे व जयपुर में बढ़िया चित्र बनते थे। चित्रकार बड़े बड़े राजाओं के नवाबों के तथा शाही घराने के चित्र बना कर दूसरे प्रान्तों में घूम घूम कर बेचा करते। अर्थ प्राप्ति भी होती और साथ ही साथ प्रतिष्ठा भी। अतः आगरे से एक चित्रकार कृष्णगढ़ रवाना किया गया। वहाँ जाकर उसकी स्त्री रनिवास में चित्र लेकर गई। राजमहिलाएँ एकत्र हो बैठ गईं। आज्ञा दी कि चित्र दिखाओ।

स्त्री बोली—हुजूर एक से एक बढ़िया तस्वीरें हैं। मुलाहिजा हो। यह देखिए इरान के बादशाह हैं। यह जहाँगीर की है। अहा किस खूबी से बनाई है। शहजादे की तस्वीर पर गौर करिएगा। खरीदने लायक चीज है। (चारूमती के हाथ में एक तस्वीर थमा कर) राजकुमारी यह आलमगीर हैं जिनका कि रोब आलम पर छाया हुआ है। शाहन्शाहे हिन्द हैं। देखिए कितने खूबसूरत हैं।

चारूमती—खाक खूबसूरत हैं। कैसी तो दाढ़ी लटक रही है। कोई अच्छे राजाओं के चित्र दिखा।

"हाँ हाँ लीजिये, यह राजा टोडरमल। यह राजा मानसिंह की है।"

"ऊँह मुझे ऐसे खुशामदी राजा पसन्द नहीं। मुझे ऐसे चित्र बता जो सच्चे शब्दों में राजा हों या वीरों के चित्र हों।"

"देखिए, यह राठोड़ अमरसिंह, यह राणा राजसिंह उदेयपर वाला।"

"हाँ, यह चित्र वास्तव में खरिदने योग्य है, राणा का चित्र मैंने लिया। इसका मूल्य ले जा।"

चित्रकार ने आगरे जाकर आलमगीर से कहा कि राजकुमारी चारूमती की जितनी प्रशंसा की जाय उतनी ही कम है। परन्तु उसका रुख शाह के अनुकूल नहीं है।

आलमगीर बादशाह ने कृष्णगढ़ के राजा के नाम आज्ञा लिख भेजी कि चारूमती का व्याह उसके साथ कर दें। अन्यथा वह उसे और उसकी राजधानी को नष्ट कर अपनी इच्छा पूरी करेगा।

चारुमती ने यह आज्ञा सुनी तो एक क्षण के लिये काँप गई। उसने दृढ़ निश्चय कर एक पत्र उदयपुर राणा राजसिंह को लिख भेजा कि आप शीघ्र आवें और मुझे व्याह कर ले जावें। मैंने मन से आपको पति मान लिया है। आकर रक्षा करें। जैसे कृष्ण ने रुक्मिणी की की थी।

× × ×

क़ासिद यह पत्र ले जाकर राणा की सेवा में उपस्थित हुआ। पत्र खोलकर पढ़ा तो यह निश्चय नहीं कर सके कि उनका अब क्या कर्तव्य है। कासिद से कहा कि इसका उत्तर कल मिलेगा; अभी जाकर विश्राम करो।

मन्त्रियों तथा सामन्तो को बुला कर चारूमती का पत्र पढ़ सुनाया। अब इस समय हमारा क्या कर्तव्य है? यह निश्चय कर उत्तर देना आवश्यक है। खूब सोच विचार कर अपनी अपनी सम्मति दें। यदि व्याहने गये तो हमें बादशाह से अवश्य युद्ध करना होगा। शाही सेना से टक्कर लेनी होगी। यदि नहीं जाते हैं तो अपना विरुद घटता है। नारी की रक्षा करना और वह भी आपत्ति में फँसी हुई की, अपना धर्म है।" सर्व सम्मति से यही निश्चय किया गया कि राणा जी को अवश्य कृष्णगढ़ जाकर चारूमती को व्याह लाना चाहिए। पीछे होगा जैसा देखा जावेगा। युद्ध से डर कर कर्तव्य विमुख नहीं होंगे। सेना की तैयारी की

जाने लगी। खटका यह लग रहा था कि कहीं आगरे से फौज आ गई और व्याह से पहिले ही युद्ध होने लगा तो कठिनाई होगी। एक दफे कुशल पूर्वक व्याह हो जावे तो फिर कोई चिन्ता नहीं। यह विचार कर सेना को आगे आगरे के मार्ग पर भेजना उचित समझा कि जब तक व्याह न हो जावे शाही फौज को रोके रखें। कृष्णगढ़ की तरफ नहीं बढ़ने देवे।

राणा राजसिंह ने सलूंबर रावत जी को बुलाकर कहा, "इस सेना के सेनापति नियुक्त किये गये हो। शाहीसेना बढ़ने न पावे?"

"अन्नदाता! जब तक सिर धड़ पर है।"

मुझे स्वयं पूर्ण दुख है कि तुम्हारी शादी हुए एक महीना भी अभी नहीं हुआ!"

"सेवक का तो काम ही यही है।"

"जुहार, रावत जी, जीवित रहे तो फिर मिलेंगे।"

× × ×

"आज आप खिन्न चित्त क्यों दिखलाई देते हैं?"

"नहीं तो? अन्नदाता कृष्णगढ़ व्याहने जा रहे है।"

"एकदम ही निश्चय कैसे हो गया? कल तक तो बात ही नहीं थीं।"

"वहाँ की राजकुमारी ने प्रार्थना की है। वह आलमगीर से व्याहना नहीं चाहती। शाहीसेना से युद्ध करना होगा।"

"युद्ध तो अवश्य ही होगा। तब तो आप भी साथ में होंगे?"

"हाँ, हाडी रानी क्या करूँ!"

"करें क्या? युद्ध करिए! अवश्य विजयी होंगे आप।"

"जीवित लौटने की आशा नहीं, तुम्हें व्याहे तो अभी एक महिना भी नहीं हुआ। हाथों से महँदी भी नहीं छूटी। तुम्हारा दुर्भाग्य है।"

"दुर्भाग्य क्यों सौभग्य कहिए।"

"तुम्हें छोड़ते जी नहीं चाहता। मुझे अपनी चिन्ता नहीं, तुम्हारे विषय में रह रहकर विचार आता है। मैं तुम्हें सुख नहीं पहुँचा सका।"

"क्या युद्ध पर जाते समय चूँडावत अपनी स्त्रियों से इसी प्रकार की बातें किया करते हैं।"

"नहीं, मैं कायर नहीं हूँ। मरना और मारना मेरे लिये खेल है। मैं चूँडावत हूँ, मेरी पुश्त दरपुश्त रणाङ्गन में लेटी है, काल से भी नहीं डरता।

तभी तो यह कार्य आपके वंश के यश के अनुरूप ही तो आपको सौंपा गया है। युद्ध स्थल तो सदा से इस कुल का आमोद-भवन रहा है। ऐसे समय में उमंग क्यों नहीं?

"केवल तुम्हारे कारण?"

"मेरी तरफ से निश्चिन्त रहिए। मुझे अपने कर्तव्य का ज्ञान है।"

× × ×

"सेना सज चुकी है, सवारी का घोड़ा हाजिर है।"

"अच्छा, मेरा जिरह बख्तर लाओ, ठहरो, जाओ देख आओ हाड़ीरानी क्या कर रही हैं, कह देना मैं बिदा होता हूँ।"

आज्ञा पा राजपूत भीतर जाकर बोला, अन्नदाता ने फरमाया है कि वे बिदा होते है।

"जाओ, कह देना कि मेरी ओर से निश्चित रहें।"

थोड़ा समय बीता होगा कि पुनः वह राजपूत भीतर आकर बोला—"अन्नदाता ने फिर मुझे भेजा है, आपकी खबर लाने को"

हूँ, ऐसी बात ठाकराँ, देखूँ तो तुम्मारी तलवार की धार कैसी तेज है? तेज कराई हेगी न?

"देखिए न बहुत तीक्ष्ण है?"

"लो तुम्हें यह सिर काट कर देती हूँ। जाकर दे देना और कह देना कि अब निश्चित होकर कर्तव्य पालन करें, स्वर्ग में प्रतीक्षा करूँगी।"

खट से कोमल कलाई के एक झटके ने अपने ही सिर को काट कर जमीन पर डाल दिया। आँगन रक्त से लाल हो गया।

× × ×

"तुम रास्ता रोके क्यों खड़े हो, रास्ता छोड़ो, देखते नहीं हो, शाही फौज जा रही है? हटो यहाँ से।"

"मैं मार्ग नहीं छोड़ता। मैं युद्ध करूँगा।"

"बेवकूफ है। क्यों जान बूझकर जान जोखिम में डालता है। हट जा, दे दे रास्ता। वर्ना मारा जावेगा। कहना मान जा।"

"कह दिया न! मरने के लिये ही तो मैं यहाँ आया हूँ।"

"कौन है और किस गर्ज से यहाँ आकर तुमने घाटी का तंग रास्ता रोक रखा है। हमें गुजरने क्यों नहीं देता।"

"पागल मालूम होता है। किसी औरत का सिर बालों से बाँध कर गले में लटका रखा है। गुस्से में उबल रहा है। साफ साफ बता वर्ना कत्ल किये जाते हो।"

मैं यहाँ से टस से मस नहीं होने का जब तक कि दुलहिन को लेकर राजसिंह जी उदयपुर नहीं पहुँच जावे। सम्भालो मेरी तलवार आती है।

"चूँड़ावत वीर की जय"

× × ×

घाटी में युद्ध कैसा हुआ वह हाल बताओ।

अन्नदाता, चूँड़ावत वीर काम आये। उनकी वीरता की प्रशंसा का वर्णन नहीं किया जा सकता। जहाँ उनकी तलवार चलती वहाँ लाशों का ढेर लग जाता। आवेश में उन्मत्त हो रहे थे। जब तक बारात सकुशल नहीं पहुँची तब तक उस बड़ी सेना को थामे खड़े रहे। यह सब कुछ उनकी पत्नी के उत्सर्ग ने किया। अन्त समय तक वह सिर उनके गले में लटकता जोश दिला रहा था। धन्य है।

रत्न-कण

जलाती जिसे क्रोध की आग,
धर्म का उसको बन्धन व्यर्थ
न सीखा जिसने करना त्याग,
प्रेम का वह क्या जाने अर्थ॥
रहा जिस पर आलस्य सवार,
मनुज वह जीवित मृतक समान।
लोभ ही है जिसका व्यापार,
बराबर उसे मान अपमान॥

—श्रीनाथसिंह

पीठ का सौंदर्य

यदि आपको अपनी पीठ का सौंदर्य प्रदर्शित करना हो तो तीन बातों का ध्यान रक्खें। (१) ब्लाउज की बनावट। (२) साड़ी का पहनावा। (३) केश विन्यास।

ब्लाउज जहाँ तक हो सपाट रंग का हो, उसकी बनावट सादी हो; पर वह इस तरह सिला हो कि पीठ से बिल्कुल सटा रहे। साड़ी कंधे पर से डाली जाय और इस तरह कि ब्लाउज का काफी हिस्सा दिखाई पड़े। केश सुन्दर ढङ्ग से गूँथे जायँ। पीठ का सौंदर्य प्रदर्शित करने के लिए यह भी जरूरी है कि साड़ी भड़कीले रंग की न पहनी जाय। क्योंकि यदि साड़ी भड़कीली होगी तो सारा ध्यान वही खींच लेगी। हाँ, आप चाहें तो ब्लाउज भड़कीला पहन सकती हैं।

एक सुन्दर सामाजिक कहानी

संशय की चिंगारी

लेखिका कुमारी 'विकल'

ओह ! कितना प्यार करती थी मैं भैया को कितनी निष्ठा थी मेरे मन में उनके लिए। अपने भैया के लिए प्राणों की बाजी लगाने में भी नहीं सकुचाती थी मैं। यद्यपि वह मेरे सहोदर नहीं थे, मामा के लड़के थे, तथापि इन्होंने सहोदर से अधिक मान और प्यार पाया था। यह मेरे से चार वर्ष बड़े थे। बालकाल से ही हम दोनों एक दूसरे को बहुत प्यार करते थे। बाल्य क्रीड़ाओं तथा अठखेलियों से पूर्ण था हमारा जीवन। भैया भी मुझे अतीव स्नेह करते थे। कभी उन्होंने मेरी कोई बात नहीं टाली थी। मैं कुछ भी कह दूँ वह अवश्य पूर्ण कर देते थे।

मेरे मामा एक एक बड़े व्यवसायी थे। उनकी पर्याप्त आय थी परन्तु अपना अध्ययन समाप्त करने पर भी भैया उस व्यवसाय में कुछ कारणों से सहयोग नहीं देते थे। मैंने कितनी ही बार उन्हें समझाया उनमे मिलने की कि इस प्रकार खाली दिन बिताने ठीक नहीं। कुछ काम करो और वह मेरी बात से सहमत भी थे और प्रयत्न भी करते थे काम करने का परन्तु फिर भी कुछ पारिवारिक परिस्थियों के कारण सफल नहीं हो पाते थे। मेरी एक मात्र यह ही अभिलाषा थी कि वह व्यवसाय को उन्नति दे पर उनका मन कुछ ऐसा फिर गया था कि चाहने पर भी वह कुछ नहीं कर पाते थे और यह ही उनका सबसे बड़ा दोष था। इसी से घर के लोग उनसे नाराज रहते थे परन्तु मैं उनसे स्नेह करना नहीं छोड़ सकी ! उसी प्रकार हँसी खुशी से बीत रहे थे हमारे दिन। जब कभी हम कानपुर अपने मामा के जाते तो हमारी कल्लोलों से गुञ्जरित हो उठता सारा घर, परन्तु अब घर के लोगों को हमारा इस प्र ार खेलना-कूदना पसन्द नहीं था ! मेरे मामा के दो लड़कियाँ थीं, उन्हें तथा मेरी मासी को हमारे इस अपूर्व स्नेह पर ईर्षा होती थी और इससे ही उन्होंने कई बार हमें बुरा-भला कहा, कितनी ही बातें बनाईं। यहाँ तक कि उन्होंने माता जी से कभी बहुत कुछ कहा पर वह सुनी अनसुनी कर जाती थी। मैं भी कभी इन बातों को विशेष महत्व नहीं देती थी और सदा टालती आ रही थी कि एक दिन मेरा वह सुख स्वप्न टूट गया। मेरे कोमल हृदय पर पर तुषारापात हो गया। संशय की यह चिंगारी ज्वाला बन कर छलक उठी। संध्या के ६ बजे का समय था। मंद-मंद वायु चल रही थी। आकाश मेघाच्छन्न था और शीघ्र ही वर्षा होने की संभावना थी। मैं शीशे के सामने खड़ी अपने बालों में कंघी कर रही थी कि माता जी ने आकर मेरा ध्यान भंग कर दिया। वह कहने लगी—"बाला, तू योगेश के पास पत्र न डाला कर।" सुन कर मेरा धक् से हो गया। मैं अप्रतिम सा उनका मुँह ताकने लगी और शंकित हृदय से पूछा "क्यों ! क्या बात है।"

वह बोली "अब तुम दोनों बड़े हो गए हो ! तुम्हारे यह भावपूर्ण पत्र सब को अच्छे नहीं लगते ! अब तुम्हारा साथ साथ खाना-खेलना सबको बुरा जँचता हैं। समाज की हमें यह एक पाप है। अब की जब तेरे पिता जी कानपुर गए थे तो तेरी मासी और मामी ने तुम दोनों के विषय में बहुत कुछ कहा और यह भी कहा कि बाला को अब योगेश के पास पत्र न डालने दिया करो। अतः यह ही उचित है कि तुम्हारा पत्र-व्यवहार बन्द हो जाय।"

लज्जा और क्षोभ से मेरा मुख नत हो गया। उफ ! इस पवित्र स्नेह पर भी आक्षेप ! मेरा सारा शरीर एकबारगी कंपित हो उठा। कुछ समझ में ही नहीं आ रहा था कि यह मामला क्या है ? कैसे भावपूर्ण पत्र होते हैं जो नहीं लिखने चाहिए और मैंने तो कभी कुछ लिखा ही नहीं ! हाँ उनके पास सदा उनके काम करने के बारे में तो अवश्य लिखती रही हूँ पर उसमें तो ऐसी कोई बात नहीं ! मैंने बहुत सोचा पर मैं कुछ नहीं जान पाई और मैं सीधी अपने कमरे में आकर भगवान की तस्वीर के आगे घुटने टेक कर विह्वलता से कहने लगी "भगवन् ! यह कौन से पापों का दंड है। आज तक मुझे गर्व था कि मैं सब की विश्वास-पात्री हूँ। सबको मेरी सच्चरित्रता पर विश्वास है, किन्तु अब पता लगा कि औरतों और मेरी माता तक को

मुझ पर विश्वास नहीं है ! मैं, जो कि एक आदर्श को लेकर चलनेवाली थी ! जिसके सामने सीता, सावित्री का चरित्र रहता था—क्या वही मैं आज इतनी पतिता हो गई कि माँ से भी अधिक आदरणीय और पूज्य भाई के प्रति भी मेरा हृदय कलुषित भावनाओं से भर उठा। प्रभु ! आप साक्षी हो। यदि भैया के प्रति कोई भी कुभावना मेरे मन में हो या उनके मन में हो। यदि कभी तनिक भी पाप भावना हमारे मन में उपजी हो तो मुझे कठोर से कठोर दण्ड देना और यदि हमारा स्नेह पवित्र तथा निस्वार्थ हो, यदि मैं सत्य पथ पर होऊँ तो मेरी चिर-संचित अभिलाषा पूरी करना। मेरे भैया का कंटकित पथ सुगम करना और और उन्हे उसे पार करने की दृढ़ता देना। भैया का जीवन सफल होए।"

उस समय मेरी दशा विक्षिप्त की सी हो रही थी। मैं अपने कमरे में कोच पर पड़ी अपने आवेग को कम करने का प्रयत्न कर रही थी। बाहर मूसलाधार वर्षा हो रही थी और बिजली अपनी गर्जना से पृथ्वी को कंपायमान कर रही थी। अचानक मुझे एक विचार आया और मैं बाहर बरांडे में खड़ी हो क्षितिज की ओर देखकर कहने लगी, "हे अन्तर्यामी भगवन्, यदि हम भाई-बहन के ही पवित्र स्नेह बन्धन में बँधे हों और यदि हमने आज तक कोई भी कुकृत्य न किया हो तो यह वर्षा बन्द हो जाये और अभी सूर्य देव के दर्शन हों, पर यदि दूसरों का संशय ठीक हो और मेरे भैया वास्तव में कहीं कुछ अनुचित व्यवहार करते हो तो यह गर्जती हुई बिजली मेरे ऊपर गिर कर मुझे भस्मीभूत कर दें।" और मेरे हर्ष का पारावार नहीं रहा जब मैंने देखा कि वर्षा धीरे धीरे कम हो रही है और वास्तव में ही थोड़ी देर में सूर्य भगवान हमारी निष्कलंकता को प्रमाणित करने के लिए अपनी तीव्र किरणों सहित देदीप्यमान हो उठे। मेरा मन खुशी से नाच उठा और मुँह से निकला कि यह धूप नहीं है प्रत्युत मेरे सतीत्व का तेज है।

मैंने माता जी से भैया के पास एक पत्र डालने की अनुमती माँगी और आज्ञा मिलने पर मैंने लिखा—

भैया,

यह मेरा अंतिम पत्र है। तुम्हें आश्चर्य होगा कि मैं—जो कभी तुम से पत्र डालने का अनुरोध करती थी—आज कह रही हूँ कि मेरे पास पत्र न डाला करो। क्यों अपने कारण तुम्हें भी कलंकित करूँ ! दूसरों की संदेह-भरी दृष्टि का शिकार बनाऊँ ! मैंने ही तो तुम्हें इतना स्नेह करना सिखाया था जिससे कि तुम्हें इतना कुछ सुनना पड़ा।

अन्तिम चाह है कि सच्चरित्रता, सज्जनता तथा दृढ़ता से ओत-प्रोत हो तुम्हारा जीवन।

भैया मैं तुम्हारे हाथ जोड़ती हूँ कि अब कभी मेरे पास पत्र न डालना।

तुम्हारी बहन
बाला

मेरे ऊपर इसका इतना प्रभाव पड़ा कि उस दिन से मैं बहुत ही गंभीर रहने लगी। मुझे हार्दिक संताप था पर मैं अपने दुःख को, अपनी वेदना को सदैव प्रयत्न से हँसी के आवरण में छिपाये रही। कभी भी अपनी विह्वलता को किसी पर प्रकट नहीं होने दिया। मैंने रो रो कर हँसना सीख लिया था। यह ही था मेरे भैया की शिक्षा थी। मेरे स्वस्थ्य पर भी इसका बहुत आघात पहुँचा। सब इस आकस्मिक परिवर्तन से चकित थे।

(२)

छः माह पश्चात्—

जून का महिना था। प्रातः के लगभग १० बजे होंगे कि अचानक भैया आये। सुनते ही सब लोग उनके पास भाग गये परन्तु मैं भोजनालय में चित्रलिखित सी ही बैठी रही। साहस ही नहीं होता था उनके सम्मुख जाने का। पहले कभी भैया आते तो मैं उनके पास तुरन्त भाग जाती थी मुझे अपार हर्ष होता था, किन्तु उस समय तो मेरे हृदय में द्वन्द मचा हुआ था, परन्तु ऊपर से मैं ज्वालामुखी पर्वत के समान शान्त बैठी थी। थोड़ी देर उपरान्त भैया ही मेरे पास आये। मैं उन्हें देखते ही विचलित हो उठी और मेरे नेत्र डबडबा आये। मैंने आश्रुओं को छुपना चाहा पर भैया की दृष्टि से उन्हें नहीं बचा सकी और वह भी मुझे देख कर बाहर चले गये।

एक दिन संध्या समय सब लोग आँगन में बैठे थे। गप्पों का बाजार गर्म था पर मेरा मन वहाँ नहीं लग रहा था। मैं कोठी के पिछवाड़े एक पेड़ के नीचे जाकर बैठ गई। वहाँ का वातावरण उस समय बहुत ही शान्त था।

मैं अपने ध्यान में लिप्त थी कि भैया की आवाज सुन कर चौंक उठी। मुझे उनके आने का तनिक भी आभास नहीं हुआ था पता नहीं कब से खड़े वह मुझे देख रहे थे। वह मेरे पास बैठते हुए बोले "बाले, बात क्या है।"

बात सुनते ही मेरा रुका हुआ अश्रुप्रवाह बाँध तोड़कर बह निकला। वह भी किंकर्तव्य विमूढ़ से बैठे देख रहे थे। अन्त में बड़े स्नेह से मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा "बोलो तो बाला की मामला क्या है?"

मैंने सिसकते हुए उत्तर दिया "मुझे कुछ नहीं मालूम। हाँ इतना पता है कि मौसी वगैरह नहीं चाहती कि हमारा इतना स्नेह सम्बन्ध रहे। अब की जब पिता जी कानपुर गये थे तो उनसे किसी ने कुछ कहा था इससे ही उन्होंने मुझे पत्र डालने को मना कर दिया। बस और मैं कुछ नहीं जानती।"

इसके आगे मैं कुछ नहीं बोल सकी और मेरी हिचकी बँध गई। भैया भी बड़ी बतारता से अपने को रोके बैठे थे। "ओह! ममतामयी देवी" कह वह वहाँ से उठ आये। दो दिन बाद भैया चले गये।

(३)

एक दिन ग्रीष्म अपने ताम्रमय करों से पृथ्वी को लाल कर रही थी। पेड़ों के पत्ते झुलस से गये थे। मैं पंखा खोले बैठी कोई उपन्यास पढ़ने में संलग्न थी। अचानक पता लगा कि भैया अब व्यवसाय में पूरा मन लगाते हैं। अभी हाल में ही उन्होंने एक ठेका लिया था जिसमें उन्हें ४० हजार का लाभ हुआ। सुन कर मैं हर्ष विभोर हो उठी। मेरे हर्ष की पराकाष्ठा नहीं रही? और मैं भगवान की तस्वीर के आगे जाकर खुशी से चिल्ला उठी। "भगवान आप कितने सहृदय हो। आज आपने मेरी लाज रख ली। मेरी जन्म जन्मान्तर की संचित अभिलाषा पूर्ण कर दी मेरी पवित्रता प्रमाणित कर दी। भैया की सफलता ही हमारी पवित्रता तथा निष्कलंकता का प्रमाण है। अब मैंने जाना कि वास्तव में ही स्नेह में एक बड़ी शक्ति है। मेरे जीवन की साध पूरी हो गई। आज मेरी तपस्या सफल हुई प्रभो।"
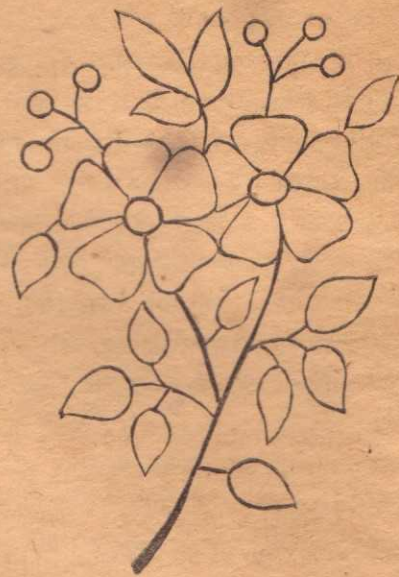
एक छोटा कसीदा

यहाँ एक छोटा सा कसीदा दिया जा रहा है। इसे रूमाल, तकिया के गिलाफ, मेजपोश पर काढ़ सकती हैं। जम्पर या जैकेट में पीठ पर भी इसे काढ़ा जा सकता है।

इसे भरा काढ़ना चाहिए। डंठल कत्थई, पत्तियाँ हरी, कलियाँ पीली और फूल लाल धागों से काढ़ें। फूलों के बीच के बुन्दों को पीला काढ़ें।

—सरला बाजपेयी

एक विचार पूर्ण कहानी

नम्बर १

लेखक, विजय बन्धु

अभी चान्दनी छिटकी हुई थी और अभी घनघोर वर्षा होने लगी। इस समय ऐसा हुआ तो बहुधा यह भी तो होता है कि खूब वृष्टि के बाद सहसा चान्दनी आ जाती है। और केवल प्रकृति प्रांगण में ही नहीं मानव-जीवन के आँगन में भी तो ऐसे दृश्य बराबर दिखाई देते रहते हैं। फिर इसके कौन सी अचरज की बात हुई जो कल वेश्या थी वह आज बधू हो गई।

किन्तु नहीं, कुछ समाजों ने मानव-जीवन के अनेक नियमों का बेढब ठेका ले रखा है और उनमें से कुछ की यह वज्र-कठोर घोषणा है कि जो एक बार किसी प्रकार भी वेश्या मान तक ली गयी वह भी फिर अपने जीवन में कभी बधू बनने की अधिकारिणी नहीं हो सकती। हर्ष की बात इतनी ही है कि ऐसे समाजों के मनमाने अधिकारों से पूर्ण इन घोषणाओं के मूल कारणों को जानने, उन पर यथेष्ट विचार करने तथा उनके विरुद्ध कार्य कर सकने की शक्ति भी अनेक युवकों और युवतियों में भी सदैव रही है और इस समय भी है। अगर कोई समाज ऐसे युवकों और ऐसी युवतियों को चिढ़ाने के भाव से एक नम्बर का युवक और एक नम्बर की युवती कहने लगे तो इसमें उन्हें अपनी निन्दा न समझनी होगी, क्योंकि एक दिन सम्पूर्ण समाज को सच्चाई के साथ यह स्वीकार करना होगा कि ऐसे सत्साहसी युवकगण और ऐसी सत्साहसी युवतियों को समाज में प्रथम स्थान देना ही उनके और अपने साथ उचित न्याय करना है।

ऐसे ही विचार उस युवक में थे जो नम्बर १ के नाम से बदनाम होने की जगह सुनाम होता जाता था और उस युवती के भी जो उसकी साथिनी बनी थी।

युवक नम्बर १ ने कहा यमुना के पुल पर से यमुना की बढ़ती हुई प्रचंड धारा में तुम कूद सकीं, यह सुन कर ही मैंने सोचा कि तुम युवती नं० १ न हो!

युवती नम्बर १ ने कहा—जी हाँ, और आप फौज के सामने गोली खाने के लिये छाती खोलनेवाले होकर मेरे सामने आगये तब मैंने भी सोचा कि आप कहीं युवक नम्बर १ न हों!

युवक नम्बर १ ने हँस कर कहा—और जब तुमने अपने बचानेवालों से साफ साफ कह दिया कि तुम वह हो जिसे समाज वेश्या कहता है और तुम्हारे बचानेवालों में से एक ने यह तुम से सुन कर मुझे सब हाल सुनाकर कहा कि उसे यह सुनते ही बहुत रंज हुआ कि तुम्हें बचाया ही क्यों तभी मैं तुम्हें देखने को दौड़े बिना न रह सका।

युवती नं० १ ने हँसकर कहा—दौड़ते क्यों न?

युवक नं० १ कहलाना तो भाग्य में लिखा था! मुझे लेकर अपने घर द्वार को छोड़ना पड़ा, माँ-बाप, भाई-बहन को छोड़ना पड़ा, समाज से सब सम्बन्ध त्याग देना पड़ा—

बस—बस!—असत्य को मत अपनाओ, मानव समाज तो मुझे अब पहली बार अपनाने जा रहा है। मेरे घर के लोगों में से किस की सहानुभूति मेरे और तुम्हारे साथ नहीं है? यह सच है कि वृद्ध लोगों में और कम अवस्था वालों में से भी कुछ में अपने संस्कारों के कारण लड़कपन से मस्तिष्क में दृढ़तापूर्वक अंकित कर दिये हुए विचारों के कारण—ऐसा साहस नहीं है कि वे हमें पहले की तरह अपनाये रहें लेकिन सच यही है कि वे हमें अब पहले से कहीं अधिक अपना रहे हैं।

'जी हाँ, तभी तो हमारा नं० १ कर दिया है और अपना दूसरा!'

और इसी समय नीचे से तीन आवाज़ें आईं—

नम्बर १—नम्बर १—नम्बर १

'आइए, नम्बर दो महाशयो, ऊपर ही चले आइए!'

'नहीं, आप लोग नीचे आइए, एक भोज में चलना होगा!'

'हम न जावेंगे!'

'क्यों ?'

'यह सब ऊपर आकर सुनिए।'

तब वे तीनों ऊपर जा पहुँचे।

'आप लोग कहाँ से आ रहे हैं ?'

'भाभी जी के यहाँ से !'

'कौन भाभी जी ?' युवक ने जानते हुए भी अनजान-सा पूछा।

'वे ही जिन्हें लोग विवाहित वेश्या कहते हैं और जिन्हें अब हम नं० ३ के नाम से पुकारना चाहते हैं।'

'आखिर उन्हें लोग ऐसा क्यों कहते हैं ?'

'इसलिए कि उनके प्रेमियों की संख्या बढ़ती जा रही है और उनके पति यह सब चुपचाप देख रहे हैं।'

'तो क्या वे अपने प्रेमियों से पैसे लेती हैं ?'

'पैसे की उन्हें कौन कमी है ? उनके प्रेमियों में कुछ तो बिल्कुल कंगाल हैं—लोफर हैं !'

'तो क्या उन्हें अपने पति से यथेष्ट प्रेम नहीं मिला, या जो कुछ भी स्त्री पति से चाह सकती है उसमें कुछ कमी हो गई ?'

उन तीनों में से एक ने जो अपने को भाषा-शास्त्र का और अनेक विद्याओं का पंडित समझते थे विचित्र हँसी हँसते हुए कहा—भाई, वेश्या का मूल अर्थ तो जनता को—या साधरण जनों को—अपनाने वाली स्त्री ही थी। वेश्याओं की बुद्धकाल में, उससे बहुत पहले से और बाद को भी यहाँ और दूसरे 'सभ्य' देशों में भी विशेष आदर-सत्कार किया जाता रहा है। उनका राजनैतिक क्षेत्र में विशेष उपयोग भी होता आया है। भाभी जी के संस्कार वैसे ही है।

दूसरे ने कहा—अरे यह सब तो यह जानते-मानते ही नहीं बल्कि इसे फिर कार्य में परिणत कर रहे हैं, केवल भाभी जी ही तो ऐसी नहीं।

तीसरे ने कहा—यह सब तो हुआ आप लोग सहभोज के लिए चलने को क्यों तैयार नहीं ! वहाँ तो सम्पूर्ण समाज से मिल जाने का आपको सुअवसर मिलेगा।

युवक नं० १ ने कहा—आप लोग मुझे लड़कपन से जानते हैं और मैं भी आप लोगों को लड़कपन से जानता हूँ। आप में से एक ने पचास साल की अवस्था में, ऐसी संतानें रखते हुए जिनकी संतानें मौजूद हैं, स्वयं एक विवाह और कर लिया है उन्हें आपकी समाज ने किस नम्बर में रखा है ? आप में दूसरे महाशय ऐसे हैं जिन्होंने तीन हजार दहेज विवाह में लेकर भी दो हजार और ऐंठना चाहा और न पाने पर अपनी स्त्री को छोड़ दिया—चाहे वह सती रहे, या भाभी जी से कहीं बदतर हो जाये। आप में तीसरे महाशय अपना विवाह ही नहीं कर रहे हैं और संभवतः अपने को भाभी जी और ऐसी अनेक स्त्रियों का प्रेमी समझते हैं ! मेरी स्त्री को भी आप लोग भाभी जी बनाना चाहते हैं और पुराने समय से चले आये नियमों के अनुसार उसे आदर सत्कार देना चाहते हैं और हमें सहभोज में सम्मिलित होने का गौरव भी देने को तैयार हैं किन्तु हम दोनों की प्रार्थना यह है कि हम आपके और आपके उच्च समाज के सर्वथा अयोग्य हैं—हमें क्षमाकर देने की उदारता आपको अवश्य दिखलानी होगी।'

'आप समाज का अपमान कर रहे हैं।'

अब युवती नम्बर १ ने कहा—कौन सी समाज ? आप लोगों की समाज न ? अगर हम उससे ऐसा व्यवहार न करें तभी हम दोष और पाप के भागी ठहराये जा सकते हैं।'

'आप दोष और पाप कहने का साहस करती हैं ?'

'अगर इनमें ऐसा सत्साहस न हो तो ये युवती नं० १ रह ही न जावें।'

'और आप युवक नं० १ न रह जावें।'

'जी हाँ, यही असली बात है।'

'तो हम लोग जाते हैं—पर आप याद रखिएगा—'

'बस-बस—आप लोग जाइए, हम कुछ भी न भूलेंगे—आपके काम भूलने योग्य नहीं हैं, न आपकी बातें ही भूलने योग्य नहीं हैं—धन्यवाद !'

इस धन्यवाद का उत्तर न दे वे तीनों तेजी से उठ कर चले गये।

युवती नं० १ ने युवक नं० १ की ओर देखा और कहा—नं० १—नं० १

युवक ने वैसे ही प्रेम के स्वर में उत्तर दिया—तुम्हीं हो नम्बर १—नम्बर १—और वे दोनों समझ गए कि वे सचमुच नम्बर १ हैं।

पति-पत्नी की अनबन की एक कहानी

भ्रम

लेखिका, मिसेज कमला शिवपुरी बी० ए० बी० टी० अलवर

(१)

धीरे धीरे छत पर चक्कर लगा रही थी। कोई बात करने वाला भी न था। कोई तो खैर मिल भी जाता पर "कोई" से तो दिल भी न लगता। दिल तो उचट रहा था। सुरेन्द्र को तो बात तक करने का समय नहीं था। न वह सुमन की हृदय-गति की ओर ही ध्यान करता था। दिन दिन बात बढ़ती जाती थी। दोनों किसी समय में एक दूसरे के निकट होते हुए भी एक दूसरे से दूर, कोसों दूर हुए जा रहे थे। फल यह था कि सुमन भी हिचकती थी, सामना होते। और सुरेन्द्र को तो जरा सा समय मिलता भी तो वह स्वास्थ्य रक्षा के लिए अकेले ही सैर को चल देते।

सबसे बड़ा दुख था कि घर में कोई बाल-क्रीड़ा न थी जो दिल उसके जरिये ही पास रहते।

यह सब विचार मन में थे ही कि विपिन की गाड़ी आई। विपिन उतरते ही बोला—"भाभी ! ओ भाभी ! घर में हो क्या ?"

मुँह पर जरा सी मरी हुई मुस्कान आ गई। बोली—"इस परेशानी की क्या आवश्यता थी। घर में न होती तो कहाँ होती ?"

"मुझे एक बड़ी जरूरी बात तुमसे कहनी है।"

"कहो, चलो जरा चाय भी पी लो।"

"अरे ! अभी चाय नहीं पी क्या ? ६ बज गए !"

"उनको अभी दफ्तर से छुट्टी नहीं मिली। अकेले पीने को जी नहीं चाहता। चलो तुम आ गये ?"

विपिन ने कहना शुरू किया—"वह बात थी न मेरी ? याद है न ? जो मेरी पत्नी होने को थी वह बीमार हो गई थी। लग्न टलने वाला था। मेरा हृदय कहता था, यह उसके माँ बाप टाल रहे हैं, वह मुझे पसन्द तो नहीं करते। उसका भी देखो प्रेम कब तक रहता है पर भगवान ने मेरी सुन ली। वह अच्छी हो गई है और न जाने उसके माँ बाप कैसे इतनी प्रसन्नता से मान गये। इसी लग्न पर विवाह कर रहे हैं। वह मेरी पत्नी महीने भर में हो जावेगी।"

"तो लाओ मुँह मीठा करवाओ। दो बार करवाना, समझे ! एक तो इस बात का जिस पर तुम प्राण देते थे वह तुम्हें मिल जावेगी। दूसरी वह दफ्तर की तरक्की क्या भूल गए ?"

"नहीं भाभी तुम्हारा मुँह मीठा तो सौ बार करूँगा। तुम तो परामर्शदायी हो। भगवान तुम्हारे रूप में मेरी सहायता करने आया तुम्हें भगवान सुखी रखे।"

यह कह विपिन जाने लगा। पर न जाने क्यों पाँच मिनट और ठहर गया। फिर चलते चलते भाभी से बोला—"तुम न होतीं तो मैं कहीं का न रहता।"

यह कह कर उसने भाभी की ओर देखा। उनमें अश्रु थे। वह कंधा हिला कर ही रह गया। कभी मेरी सहायता की आवश्यकता हो तो भूलना नहीं ? मेरा सौभाग्य होगा। तुम पर मैंने विश्वस किया, दिल का हाल कहा। तुम भी मत छुपाना ?

वह चला गया। सुमन पाँच मिनट तक गाड़ी को देखती रही। फिर ठण्डी साँस लेकर लौट पड़ी।

(२)

घर में एक आफिस भी था। न मालूम आफिस में कब से सुरेन्द्र बैठा था। आफिस की चिक हटाई कि यहीं बैठ कर इन्तजार करूँ कि अचानक ही सुरेन्द्र को वहाँ अँधेरे में गर्मी में बैठा देखा। काफी समय हो गया था और तब भी अँधेरे कमरे में बिजली न बाली थी, न पंखा ही चला था; यह देख कर सुमन कुछ चौंकी थी, और कुछ तरस भी आया था। बिजली बाल कर बोली— तुम अरसा हुआ कहते थे न कि हवा बदलने मसूरी चलोगे सो चलो हो आवें। हवा बदलने से दोनों को लाभ होगा। गर्मी आज कल खूब पड़ने लगी है।

विपिन एक दम लाल हो गया। बोला—मुझे छुट्टी आज कल नहीं मिल सकती। तुम जाना चाहो तो चली जाओ।

पहले तो सुमन मुँह देखती रह गई कि यह क्या ? मैंने तो साधारण बात कही थी ? यह इतने क्यों बिगड़ गए। पर उसने पिछले चार महीने के बर्त्ताव पर विचार किया। क्या वह दिन दिन बिगड़ता न जाता था ? वह विचार में थी कि क्या करूँ और क्या कहूँ कि विपिन गर्ज कर बोला—"जाओ, जाओ ! मसूरी देखना है तो अकेली हो आओ। कोठी तो वहाँ तुम्हारे भाई की है ही। मेरी क्या जरूरत है, मुझे समय नहीं है। जाओ जाओ आज ही जाओ। जहाँ जाना चाहो।"

चीख कर नौकर को पुकारा—"नहाने का पानी कपड़े ठीक रखो। खाना बना कि नहीं ?"

फिजूल ही चीखे जा रहा था।

सुमन को भी अपनी मौजूदगी बुरी मालूम दी। जब मेरी आवश्यकता ही नहीं तो मैं इतना क्यों मरी जाती हूँ। सोच कर उसने सामान बाँधा और सवेरे की गाड़ी से वह सचमुच मसूरी चली गई। जैसे किसी ने उसे वहाँ ढकेल दिया हो।

(३)

महीना भर का सोच कर गई थी पर दस दिन भी काटने कठिन थे। दिन को चैन नहीं रात को नींद नहीं, बड़ी परेशान थी। दिन रात पति का ही ध्यान आता और अपने पर झुंझलाती भी थी कि मैं अब भी मरी जाती हूँ यहाँ भी चैन नहीं ! क्या यही पढ़ाई का फायदा है कि पति पूछे न पूछे मैं मरी जाऊँ। मेरा हृदय तो जैसे कोई ले गया। वहाँ खोखले स्थान में टीस कैसी ?

हृदय नहीं रहा तो अब यह दर्द क्यों ?

पास की कोठी में एक और रहती थीं। उनके पति भी उनके साथ थे, एक छोटा सा बच्चा था जिसके कारण सारे दिन उनके घर में एक हँसी का फव्वारा छूटा करता था। यह देख सुमन को और भी दर्द होता, न मालूम क्यों ? सुमन की भाभी अपने बच्चों को लेकर रहती थीं, सुमन के भाई को छुट्टी मिलने पर वह भी वहीं आवेंगे यही विचार था। बच्चे बड़े थे। घूमने फिरने में लग जाते। गर्मी की छुट्टी जो थी तो पढ़ाई कैसी ? सुमन की भाभी एक दो बार कहतीं तो कभी कभी भाभी के साथ चली जाती। खोई खोई सी। मन तो कहीं और ही होता।

एक बार भाभी व बच्चे तो चाय की दावत में गये थे या शायद कहीं सैर सपाटे को। पर सुमन ने बहाना किया था सिर दर्द का। इतना तो भाभी भी समझ रही थी कि दाल में कुछ काला है। पर न तो वह पूछती न सुमन ही कुछ कहती थी।

घर से गए कुछ ही देर हुई होगी कि पड़ोसन मिलने आईं। उन्होंने देखा था कि भाभी व बच्चे ही गए हैं। वह दो तीन बार मिलने से समझ गई थी कि कुछ मामला गड़बड़ है।

आज उन्हें समय था। उनके पति किसी मुसलमान दोस्त के साथ गए थे जिनसे उनका इतना मिलना न था कि पत्नी सहित जाते। दूसरे वह दोस्त अपनी पत्नी को पर्दा कराते थे सो ठीक भी न लगता। खैर आते ही देखा कि सुमन आँखों में आँसू भरे बैठी है। न मालूम किन किन बातों का ध्यान कर रही है।

कंधे पर हाथ रखते हुए आशा, पड़ोसिन ने कहा—"बहिन मैं तुमसे मिलने चली आई। कहो, तबियत कैसी है घूमने नहीं गईं ? ऐसे बैठे बैठे तो दिन कटा नहीं करता। मैं तुमसे आज खूब बातें करने आई हूँ क्योंकि मुझे ऐसा लगता है कि तुम सोचती बहुत हो यह ठीक नहीं। आज मैं मुन्नू को भी घर छोड़ आई हूँ; इसी से कि तुम से बातें करने में वह हर्ज न करे। बहन एक बात पूछूँ। तुम्हें आये महीना भर हो गया तुम एक बार भी खुल कर न हँसी ? मसूरी क्या दार्जीलिङ्ग कुछ भी नहीं कर सकता जब तुम न खाओ न हँसो, न चलो। मुझे कई बार तुम्हें देख कर अपना पुराना दुःख याद आ जाता है। पर वह दुःख दुःख नहीं था। पीछे पता चला इससे भूल जाती हूँ या यों कहो भूलने की कोशिश करती हूँ। मुझे तुमसे सहानुभूति इसी से हुई कि मैं भी साल भर हुआ ऐसे ही ध्यान में अकेली बैठ जाती थी।

बहन शायद मेरे दुख व तुम्हारे दुख में कम अन्तर हो और तुम्हें कुछ मेरी कहानी से सहायता मिले। इसी से

कहने आई हूँ। चाहे कुछ भी हो यह प्रण करो कि मेरी कहानी अपने ही तक सीमित रखोगी।

सुमन बोली—मैं तो दुखी नहीं हूँ। पर हाँ तुम्हारी बात कहूँगी नहीं। आँखे कह रही थीं दुख का हाल।

(४)

आशा ने कहना शुरू किया—मेरे पति पर मुसीबत थी। वह सारे दिन काम करते। शाम को आकर चुपचाप लेट जाते। न मुझ से कहते थे न बोलते थे। मेरा जी परेशान रहता। मुन्नू आने वाला था। मैं बड़ी परेशान रहती कि हाय यह मुन्नू दुख की अवस्था में ही क्यों आ रहा है? सुख के दिनों में आता तो दोनों कितने खुश होते पर विधाता के आगे किस की चलती है? दिन दिन बोल चाल कम होती गई। मुन्नू का इस घर में होना भी मुझे अच्छा न लगा। मैं पीहर चली गई। वहीं मुन्नू हुआ। पर मुझे प्रसन्नता अधिक न थी। मुन्नू के पिता पत्र भी न लिखते। आता भी तो दो लाइन का पोस्ट कार्ड। बिलकुल साधारण। जी जल कर रह जाता कि यह अपना कर्तव्य भर कर रहे हैं।

एक दिन अचानक मुझे पता चला कि मेरे पति की नौकरी जाती रही। मैं कितनी भी अलग थी पर मेरा हृदय बिलख उठा। उन्हें कितना दुख होगा। उफ मैं एक मिनट भी न रह सकी। उसी दिन रवाना हो गई। पिताजी ने कहा भी कि जब तक दूसरी नौकरी न मिले उन्हें यहीं बुला लेते हैं; पर मैं एक न मानी। देखा तो वह चुपचाप अपने कमरे में बैठे कुछ सोच रहे थे। नौकर कोई घर में दिखाई न दिया। सारा घर जैसे रो रहा हो। वह मुझे देख कर अचम्भे में आ गए। मैंने दौड़ कर उनके गले में बाँहे डाल दीं। सब लड़ाई मैं भूल गई। मैंने कहा—तुम चिन्तित क्यों हो? कुछ चिन्ता मत करो। मैं सब कर लूँगी। मुझे अफसोस है, मैं तुम्हें छोड़ गई। मुझे माफ करो। अब कभी न जाऊँगी। मैं समझी न थी।"

इतना कहने से सब धुल गया था। हमने गृहस्थी किसी न किसी प्रकार चलाई। फिर यह दूसरी जगह हो गये। अब कभी मैं भूल कर भी नासमझी न करूँगी। मैंने यह सब तुम्हें सुनाया। माफ करो, इसी से शायद तुम्हारे काम की कुछ बात हो। तुम इतनी अकेली जो रहना पसन्द करती हो। कहो कुछ लाभ हुआ?

"धन्यवाद! तुम्हारी कथा से लाभ उठाऊँगी।"

थोड़ी देर बैठ कर आशा चली गई। उसकी आँखों में प्रसन्नता थी। उसने कुछ अच्छा करने का जो प्रयत्न किया था।

(५)

और सुमन अगले दिन अपने घर गई। जाकर देखा कोई नहीं था। नौकर ही था।

बहू जी खाना बनाऊँ? गुसल तैयार करूँ? बाबू जी तो गये हैं बाहर।

बाहर? कहाँ?

"शहर से बाहर।" उसकी आवाज में शान थी। जो बहू जी को नहीं मालूम था, वह जानता था।

चुपचाप सुमन ने यह भी सहा। उसने क्या आशा की थी, यहाँ क्या निकला? सुरेन्द्र ने सुमन के जाते ही अवसर का लाभ उठाया। अब समय कहाँ से आ गया?

सोचते सोचते सारा दिन व्यतीत हो गया। शाम को एक टैक्सी की हार्न! फिर उसके खुद आने से दौड़ कर सुमन बाहर आई। देखती क्या है कि विपिन उसमें से उतर रहा है। फिर देखा वह सहारा दे रहा है किसी को। पास आने पर उसका कलेजा फटने लगा। उसका ही सुरेन्द्र कह रहा था—'सुमन तुम आ गईं?' उसके स्वर में कम्पन था। उसकी बोली में प्रसन्नता। पैर लड़खड़ा रहे थे। सहारा विपिन और सुमन ने दिया। धीरे धीरे अच्छा होने पर सब बात खुल ही जावेगी कि क्यों वह खिँचा खिँचा रहता था। यही विचार सुन कर चुप रही। सात आठ दिन में उसकी सेहत बिलकुल ठीक हो गई। फिर सुमन पूछने को ही थी कि सुरेन्द्र ने खुद ही कहा—'सुमन मैंने पाप किया है तुम मुझे माफ करो।'

सुमन ने पूछा—'तुम पहले अपनी तो कहो। खिँचे खिँचे क्यों रहते थे। क्या कुछ नौकरी में गड़बड़ी? सच कहना तुम्हें क्या चिन्ता थी?'

सुरेन्द्र बोला - नौकरी तो मेरी पक्की है ही। काम से भी साहब खुश है। आशा है कुछ ओहदा बढ़ा दें।

'तो फिर क्या बात थी। जो तुम बात के लिये भी समय?'

'वही तो कह रहा हूँ। मैं जल रहा था। मैंने कई बार विपिन को आते देखा, और तुमको उसके साथ प्रसन्न भी देखा। कई बार का इतना प्रभाव न होता पर आखिरी दिन जब वह जो कुछ कह रहा था, मैंने सुना। कन्धे पर तुम्हारे हाथ रखे था। चुपचाप तुम मुस्करा दीं। वह चला गया। तुम देखती रहीं। मैं जल मरा।

फिर तुमने कहा कि मसूरी चलें। मैं समझा मुझसे झूठमूठ पूछ रही हो। जाने का उससे तय है। असल में उसने भी मुझसे उसी दिन सात दिन की छुट्टी बिना कारण बताये माँगी थी। मैं दे चुका था।

सुमन ने कहा—'विपिन! विपिन! वह एक छोकरा अपनी प्रेम कहानी मुझे बताता था। अपनी प्रेयसी को कैसे पावे, मैंने उसकी सहायता की, वह सब से कहना नहीं चाहता था कि कहीं न मिली तो सब हँसेंगे। अरे यह तुमको क्या बना! मुझसे वह पूछा तो होता, वह तो तुम्हारा भाई ही लगता है, कितना छोटा है।'

सुरेन्द्र ने कहा—'ठहरो यही नहीं। मैं छुट्टी लेकर पीछे पीछे आगरे गया। पर वहाँ दो तीन दिन बाद देखा। वह और उसकी पत्नी, वह एक दूसरे को इतना प्यार करते थे। यह मैं देख कर समझ गया, मेरा भ्रम था। तुम मुझे क्षमा कर दो।'

'मेरे जलने वाले गोले! तुम भी जले मुझे भी जलाया। अब ऐसा न हो, समझे! मैं भी न जाऊँगी रूठ कर।'

दोनों की आँखों ने समझौता कर लिया।

——

कुछ उपयोगी बातें

उबले हुये चावल मलने से स्याही के धब्बे छूट जाते हैं।

पानी में शहद की बूँद डालो, अगर वह ज्यों की त्यों रहे तो असली वरना नकली होगा।

थोड़े दूध में दो तीन बूँद नाईट्रिक एसिड डालने से दूध और पानी अलग हो जाता है।

यदि कागज पर इत्र का बूँद डालने से उसे आग पर सेंकने के बाद उड़ जाय तो असली और दाग बाकी रहे तो नकली।

—— —सुखदादेवी चौधरी

पञ्जाबी स्त्री

पण्डित किशोरीदास बाजपेयी शास्त्री ने सितम्बर की दीदी में लिखा है—'फैशन की पुतली पंजाबी स्त्री प्रतिदिन गुण्डों के उत्पात की शिकायत करती है। यह प्रदर्शन का फल है।' मैं कहूँगी यह बाजपेयी की निरी बौखलाहट है। पञ्जाबी स्त्री उतनी ही मात्रा में फैशन की पुतली है जितनी मात्रा में अन्य प्रान्तों की स्त्रियाँ हैं। और फिर गुण्डों की क्या मजाल कि वे पञ्जाबी युवती से बोलें। वे तत्काल जूतों से उनका स्वागत करेंगी। हाँ यू० पी० की स्त्री दब्बू होती है। और बाजपेयी जी ने जरूर कोई यू० पी० की स्त्री देखी होगी जिसे उन्होंने पञ्जाबी समझा होगा। क्या वे अपना यह रिमार्क वापस लेंगे।

—सावित्री, लाहौर।

लौकी का लच्छा

सितम्बर की दीदी में बहन आशारानी वर्मा ने लौकी का लच्छा बनाने की विधि लिखी है। सो तो ठीक है। पर लच्छा कद्दूकस से नहीं निकाला जाता। न ठीक निकल ही सकता है। उसके लिये बाजार में लौकी का लच्छा निकालने की मशीन मिलती है। —पद्मा अग्रवाल

बच्चों की पोशाक

पहले 'दीदी' में एक लेख छपा था कि अच्छी पोशाक से लड़की की बुद्धि निखरी थी। सितम्बर की 'दीदी' में दूसरा लेख छपा है कि पोशाक सादी होनी चाहिये। मैं इसका अर्थ न समझ सकी। किसे ठीक माना जाय?

—राजकुमारी बी० ए० विशारद

कड़ी चूड़ियाँ

अगस्त की 'दीदी' में एक बहन के प्रश्न के उत्तर में छपा है कि हाथों में ग्लीसरीन मल कर छोटी यानी कड़ी चूड़ियाँ पहनी जा सकती हैं। पर यह परेशानी क्यों उठाई जाय। ढीली और बड़ी चूड़ियाँ क्यों न पहनी जायँ। जब चाहें उतार कर रख दें जब चाहें पहने रहें। यही आज कल का फैशन भी है। —सर्वप्रिया श्रीवास्तव

? प्रश्न-पिटारी ?

दुखी जीवन

प्रश्न—मैं शहर की लड़की हूँ। जात पात की कड़ाई के कारण मैं गाँव में ब्याही गई। मेरे पति बिलकुल पढ़े लिखे नहीं हैं। न उन्हें कोई शौक है। मुझे गाँव में जरा भी अच्छा नहीं लगता और मुझे लम्बी उम्र काटनी है। मेरी नैया कैसे पार लगेगी ?

उत्तर—अपनी नैया की नाविक तुम स्वयं हो। सच पूछो तो तुम्हें यह एक अच्छा अवसर मिला है कि शहर में रह कर तुमने जो सीखा-समझा है उसे अपनी ग्रामीण सहेलियों को भी सिखाओ। अपने व्यवहार से अपने पति को भी तुम सभ्य बना सकती हो और उन पर शासन कर सकती हो। जब तुम सेवा का मर्म समझ जाओगी तब गाँव तुम्हें स्वर्ग प्रतीत होने लगेगा।

गरीब की लड़की

प्रश्न—मैं एक गरीब की लड़की हूँ। इस पर भी मेरा दुर्भाग्य यह कि मैंने ऊँची शिक्षा प्राप्त कर ली। यानी मैं बी० ए० हो गई। मेरी जाति में लड़की क्या कोई लड़का भी बी० ए० नहीं है। अब मेरी शादी में बड़ी कठिनाई पड़ रही है। मैं जात तोड़ कर शादी करना चाहती हूँ। पर मेरे पिता कहते हैं, मुझे मर जाने दो तब जो मन भावे सो करना। मैं बहुत दुःखी हूँ। क्या करूँ ?

उत्तर—कन्याओं ने अपने माता पिता के झूठे अभिमान को कायम रखने के लिये सदैव अपनी बलि की है। यह पथ तो तुम्हारा जाना हुआ है ही। पर तुम एक पढ़ी लिखी और स्वाधीन-चेता युवती हो। इसलिये तुम अज्ञात दिशा की ओर बढ़ना चाहती हो। जात पात तोड़ कर अनेक विवाह हुये हैं। तुम भी कर सकती हो। पर अच्छा होगा कि अपने पिता को विनय और तर्क से जीत लो। और नहीं तो अपनी जाति में शादी कर सकती हो। अगर कम पढ़ा पति मिलेगा तो तुम्हारी शिक्षा उस कमी को दूर करने के लिये काफी होगी।

—

बच्चों की बातें

मेरा भैय्या

मेरा भइया बड़ा है नटखट।
दिन भर घर में करता खटपट।
कभी बाबा की मूछें खींचे।
कभी उनकी आखें मींचे।
भइया ने पाली है बिल्ली।
वह बिल्ली है बड़ी चिबिल्ली।
सारा उसका दूध उड़ा कर।
छिप जाती है घर के अन्दर।
भैय्या मुझको दोष लगाये।
घर में ऊधम खूब मचाये।

—कुमारी इन्द्रजीत

पहेलियां

(१)

तुम चलो मैं आता हूँ।

(२)

हरी डंडी लाल कमान,
तोबा तोबा करे पठान।

(३)

एक जानवर ऐसा, जिसकी दुम पर पैसा।

—कुमारी इन्द्रजीत

(४)

तीतर के दो आगे तीतर। तीतर के दो पीछे तीतर॥
आगे तीतर पीछे तीतर। तो बतलाओ कितने तीतर॥

(५)

मैंने कल जो चीज भुनायी।
खतम हो गयी किन्तु न खायी॥

(६)

'कल' के आगे 'मल' लिखो उसमें जोड़ो 'ओ'।
क्या है, लिख भेजो अभी कलम हाथ में लो॥

—कमलाकान्त वर्मा।

उत्तर—(१) छाया। (२) मिर्चा। (३) मोर। (४) ३ तीतर। (५) रुपया। (६) कलम लो।

जुड़वा बच्चे

पण्डित मङ्गलसिंह जी (इन्स्पेक्टर सी० आई० डी० इलाहाबाद) ने बड़ी सफलता पूर्वक इन जुड़वा बच्चों का पालन किया है। ये बच्चे उनके भतीजे श्री हरिश्चन्द्र की सन्तानें हैं। इन बच्चों की माता सौ० किरनदेवी पण्डित बदन सिंह, (वर्मा शेल, कलकत्ता) की पुत्री हैं।

जन्म के समय बच्चों की माता बहुत ही निर्बल थीं और पारिवारिक कट्टरता के कारण उन्हें अस्पताल नहीं ले जाया जा सकता था। इस विषम स्थिति में पण्डित मङ्गल सिंह जी ने जिस धैर्य और तत्परता से लेडी डाक्टर मिसेज ग्रेस बगर की सहायता से घर पर ही बच्चों के जन्म की व्यवस्था की और उसके बाद उनकी सँभाल की उसकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है।

सौरी गृह के लिये पण्डित जी ने मकान के बाहरी भाग में एक हवादार कमरा चुना था और समस्त आवश्यक चीजों की व्यवस्था पहले से कर ली थी।

बच्चों का जन्म ५ अक्टोबर सन् १९४३ को हुआ है। पुत्र का १२-३० पर और कन्या का १-१५ पर यह चित्र कोई ८ महीने बाद का है। चित्र में स्वयं पण्डित मङ्गल सिंह बच्चों को गोद में लिये बैठे हैं। ईश्वर इन बच्चों को चिर आयु करे, यही हमारी कामना है।

अंतिम वाणी

लेखक, स्वर्गीय पंडित माधव शुक्ल

अब तो जैसे बने निबाहो।
बहुत गई थोड़ी अब बाकी
दिन दिन डूबत नैया।
तुम्हरे बिना कौन अब दूजो
हमरो पार लगैया।
अब यही लालसा एक
कृपा की कोर ठौर पाजाऊँ।
सकल वासना तज तेरे हिय
शान्ति धाम बस जाऊँ।

नोट— स्वर्गीय पंडित माधव शुक्ल हिन्दी के श्रेष्ठ राष्ट्रीय कवि थे। यह अंतिम पद उन्होंने अपनी मृत्यु शैया पर ७ अप्रैल सन् १९४३ को मृत्यु से कुछ पहले रचा था। इसके लिए हम श्रीमती सुन्दर देवी के कृतज्ञ हैं। श्रीमती सुन्दर देवी स्वर्गीय शुक्ल जी की छोटी बहन हैं और स्वयं भी हिन्दी की सुलेखिका हैं।

—श्रीनाथसिंह

कुमारी स्नेहलता बी० ए०

कुमारी स्नेहलता बी० ए० प्रसिद्ध पत्रकार श्री रामरख सिंह सहगल सम्पादक 'कर्मयोगी' की ज्येष्ठ पुत्री हैं। इस वर्ष बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी से उन्होंने बी० ए० परीक्षा पास की है। योग्यता के क्रम से उनका नम्बर तृतीय रहा। इस सफलता पर हम सहगल परिवार को हार्दिक बधाई देते हैं।

पत्नी के पत्र

'सितम्बर की दीदी में श्रीमती सरला चौबे ने मेरे संबंध में एक नोट लिखा है। इस विषय में मैं बतलाना चाहता हूँ कि 'पत्नी के पत्र' जो मैंने प्रकाशित कराए हैं केवल मनगढ़न्त नहीं हैं। श्रीमती सरला देवी के सुझाव के लिये मैं उनको धन्यवाद देता हूँ। और उनके शब्दों का आदर करता हूँ।'

—बुद्धिसागर वर्मा

रामायण परीक्षा

श्री रामायण प्रसार समिति बरहज गोरखपुर का केन्द्र इलाहाबाद में महिला विद्या-मंदिर (अहिराना) अहियापुर इलाहाबाद में खुल गया है। जो स्थानीय बहनें इस परीक्षा की तैयारी करना चाहें वे मुझ से स्कूल में आकर किसी समय मिलें। इस परीक्षा की तैयारी कराने की कोई फीस नहीं है।

निवेदिका—रमादेवी टंडन
संचालिका महिला विद्या-मंदिर, प्रयाग।

चावल के बड़े

अंदाज से, बीना फटका महीन अरवा चावल धोकर दूध में पकावें। जब चावल तीन हिस्सा पक जाय तो उतार कर सिल पर महीन पीस लें। जब यह पीठी तैयार हो जाय तो लोई बना कर उसमें मेवा (किशमीश, चिरौंजी, गरी, बादाम, इलायची दरदरा कर) कचौरी की तरह भरें और जरा सा मैदा पतला घोल कर उसी में यह बड़े लपेट-लपेट कर घी में सुर्ख कर लें। पीछे चाशनी में डुबो दें।

सलाद

टमाटर २ छटाँक। लौकी १ छटाँक। प्याज एक। बथुवा या पालक की पत्तियाँ। छटाँक भर शलजम। थोड़ा कुलफे का साग।

लौकी, शलजम कद्दूकश में कस लें। टमाटर साग की पत्तियाँ और हरी धनिया, मिर्च, अदरक बारीक कतर लें। जरा सा सरसों का तेल भी मिलावें। फिर नमक, भुना जीरा डाल कर सब एक दिल कर लें। —सुशान्ता सिन्हा

नवजात शिशु का भोजन

बच्चे के उत्पन्न होने के ३-४ घंटे बाद उसे माता के स्तनों से लगाना चाहिये। हमारे देश में एक प्रथा अति बुरी तथा हानिकारक है। वह यह कि प्रथम २-३ दिवस तक बालक को माता के दूध के स्थान पर बकरी तथा गाय का दूध पिलाया जाता है। ईश्वर ने बालक के भोजन के लिये जो दूध माता के स्तनों में दिया है वह उस नवजात शिशु के लिये सर्वथा उपयुक्त तथा पौष्टिक पदार्थ होता है। इस अनुचित प्रथानुसार बालक उस पौष्टिक पदार्थ से वंचित रहता है तथा ऊपर का दूध पिलाने के कारण बच्चे की पाचन शक्ति बिगड़ने से उसे अपच, दस्त इत्यादि रोग हो जाते हैं। इस कारण बालक को पहले ही दिन से माता का दूध देना चाहिये।

दूध पिलाने के नियम :—

१ समय :—बालक के उत्पन्न होने के पश्चात २-२ घंटे बाद दूध पिलाना चाहिये। जब बालक ३ मास का हो जावे तो २॥-२॥ घंटे बाद, तथा ६ माह के पश्चात ३-३ घंटे पर, फिर ६ मास की आयु होने पर ४-४ घंटे बाद दूध देना चाहिये।

२—बालक के दूध पीने के समय पर माता को सब कार्य त्याग कर बच्चे को दूध पिलाना चाहिये। फिर बालक चाहे कितना ही क्यों न रोवे दूसरे समय तक स्तन से न लगाना चाहिये क्योंकि रोने का कारण भूख नहीं, सम्भव है उसे कोई कष्ट हो। उसका पता लगा कर दूर करना चाहिये।

३—कभी कभी ऐसा होता है कि बालक पेट के दर्द से रोता है पर स्तनपान कराने पर चुप हो जाता है। थोड़ी देर पश्चात वह दर्द से फिर रोने लगता है तथा जो दूध वह पी जाता है वह उसका दर्द कम करने के बजाय बढ़ा देता है।

४—दूध सदैव बैठ कर, शिशु को गोद में लेकर तथा एक हाथ बच्चे के सिर के नीचे लगा कर पिलाना चाहिये। लेट कर दूध पिलाना अनुचित है।

५—दूध पिलाने के बाद बच्चे का मुँह शुद्ध पानी से धोकर स्वच्छ अवश्य कर देना चाहिये। ताकि मुँह पर मक्खी न बैठे तथा मुँहा इत्यादि रोग न हों।

६—दूध पिलाने के पश्चात बालक को बिस्तर पर लिटा देना चाहिये। शिशु को गोद में लेकर माता को कोई कार्य नहीं करना चाहिये।

यदि माता किसी कारण से दूध बालक को न पिला सके तो धाय का प्रबन्ध करना चाहिये। यदि उचित धाय न मिले तो अन्त में पशु का दूध देना चाहिये।

माता बालक को दूध कब न पिलावे

माता के हित के लिये:—

(१) जब माँ निर्बल हो, स्तनों में दूध न आता हो।

(२) माँ की कमजोरी बढ़ जाने से किसी प्रकार की हानि संभव हो।

(३) स्तनों में दर्द या घाव हो।

शिशु के हित के लिये :—

(१) माता को कोई ऐसा रोग हो जिसके बालक को होने का सन्देह हो।

(२) माता के दूध से बच्चे को अपच या दस्त हो।

(३) दूध स्तनों में कम हो या दूध से बालक क्षीण होने लगे।

धाय कैसी हो ?

ऊपर लिखत दशाओं में धाय रखनी चाहिये। उसमें नीचे लिखे गुण आवश्यक हैं।

(१) धाय युवती हो; स्वस्थ, तथा स्वच्छ हो।

(२) धाय का बालक उतनी ही आयु का हो जितनी आयु के शिशु को दूध पिलाना है।

(३) धाय के स्तनों में दूध यथेष्ठ व शुद्ध हो, दोष रहित हो, उसका बालक उस दूध को पीकर हृष्ट पुष्ट हो।

(४) धाय बालक को प्रेम से पाले।

(५) धाय का सदाचार ठीक हो।

(६) धाय को वैसे ही पौष्टिक पदार्थ खाने चाहिये जैसे बालक की माता खाती हो।

यदि ऐसी गुणवाली धाय न मिले तो बालक को ऊपरी दूध देना चाहिये। इसका वर्णन आगामी अङ्क में किया जायगा।

—मिसेज़ विमल रत्न

नवीन लेखिकाओं से

नवीन लेखिकाओं से निवेदन है कि वे 'दीदी में छपने के लिये अपनी कोई रचना भेजने से पहले 'दीदी' के दो एक अंक ध्यान में पढ़ लें। 'दीदी' स्त्रियों की व्यक्तिगत समस्या की पत्रिका है। नवीन लेखिकाएँ अपनी रचना भेजते समय इस बात को न भूलें। यदि आपने कोई सुन्दर कविता या कहानी लिखी है तो पहले उसे अपनी सहेलियों को पढ़ कर सुनावे और अगर उन्हें पसन्द आवे तो 'दीदी' में प्रकाशनार्थ जरूर भेजें।

किसी रोते बच्चे को आपने हँसाया हो, किसी दुःखी सहेली की उदासी दूर को हो, कोई नवीन ढङ्ग की रसोंई बनाई हो, कोई नया आकर्षण अपने केश विन्यास या पोषाक में पैदा किया हो तो उसका जिक्र आप कर सकती हैं। पारिवारिक शान्ति और सुख के लिये आपने कोई उपाय किया हो और आपको सफलता मिली हो तो उसका भी जिक्र करें।

विश्वास रखें, यदि आपका लेख जरा भी काम का या दिलचस्प सिद्ध हुआ तो 'दीदी' में जरूर छपेगा।

नगरों की सजावट

आजकल भारतवर्ष के बड़े बड़े नगरों में प्रमुख स्थानों पर बड़े बड़े रङ्गीन चित्र देखने को मिलते हैं। ये चित्र विविध वस्तुओं के विज्ञापक लगाते हैं। यदि चित्र सुन्दर हुये तो उनसे शहर की शोभा बढ़ती है।

इस प्रकार के चित्रों में इण्डियन टी मार्केट एक्सपैंसन बोर्ड के दो चित्र दर्शनीय हैं जो आजकल प्रायः सभी बड़े शहरों में प्रमुख स्थानों पर लगाये गये हैं। ये चित्र बहुत ही सुन्दर कला पूर्ण और भारतीय परम्परा के अनुकूल हैं। इसका श्रेय प्रसिद्ध विज्ञापक मेसर्स डी० जे० कीमर एण्ड को० लि० को है। दूसरे विज्ञापक इनसे शिक्षा ग्रहण करके अपनी ऐसी डिजाइनों में सुधार कर सकते हैं और इस प्रकार शहरों की शोभा बढ़ाने में इण्डियन टी मार्केट एक्सपैंसन बोर्ड का अनुकरण कर सकते हैं।

महात्मा गांधी की ७५ वीं वर्ष गांठ

महात्मा गांधी की ७५वीं वर्ष गाँठ के अवसर पर 'दीदी' हार्दिक प्रसन्नता प्रगट करती है और गांधी जी के दीर्घ जीवन की कामना करती है।

कस्तूर बा फंड

कस्तूर बा फंड में ७५ लाख रुपया जमा करने का निश्चय हुआ था। इस फंड में ७५ लाख से भी अधिक रुपया जमा हो गया है। यह इस बात का प्रमाण है कि इस फंड के पीछे जो भावना है उसमें देश की कितनी श्रद्धा है।

पं० जवाहरलाल नेहरू का पौत्र

श्रीमती इन्दिरा गांधी की गोद में जो पुत्र-रत्न आया है, उसका शीघ्र ही नामकरण होने वाला है। बहुत से नाम सुझाए गए हैं। एक नाम है—जवाहर गांधी। यह पारिवारिक भावना को भी व्यक्त करता है और देश के दो महापुरुषों की भी याद दिलाता है। दूसरा नाम है—राजीव रत्न ! राजीव कमल को कहते हैं। यह नाम कमला नेहरू की भी याद दिलाता है। सुना है नामों की सूची पंडित जवाहरलाल नेहरू के पास भेजी गई है। उनकी स्वीकृति आने पर कोई नाम रक्खा जायगा।

मुफ्त के पाठको से

श्री हरिश्चन्द अग्रवाल, सिकन्दराबाद, दकन, ने एक लम्बा लेख भेजा है जिसमें उन्होंने मुफ्त में 'दीदी' पढ़ने वालों की अच्छी भर्त्सना की है। उनकी पत्नी 'दीदी' की ग्राहिका हैं। वे लिखते हैं कि पचासों व्यक्ति उनसे 'दीदी' माँग कर मुफ्त में पढ़ते हैं। यह तो आनन्द की बात है। पर दुःख की बात यह है कि इस प्रकार 'दीदी' मैली कुचैली होकर और फटफुट कर उनके पास वापस पहुँचती है। इस प्रकार का अनुभव सभी ग्राहकों को होगा।

अतएव 'दीदी' के ग्राहक ग्राहिकाओं से माग कर जो मुफ्त में 'दीदी' पढ़ते हैं उनसे निवेदन है कि वे उसे सँभाल कर रखा करें और पढ़ चुकने पर ग्राहकों को फौरन वापस कर दिया करें।

——

भारतीय चायों में सर्वश्रेष्ठ

न तो मैं कोई नर्स हूँ, न कोई डाक्टर हूँ, और न वैद्यक ही जानती हूँ, बल्कि आपकी ही तरह एक गृहस्थ स्त्री हूँ। विवाह के एक वर्ष बाद दुर्भाग्य से मैं लिकोरिया [श्वेत प्रदर] और मासिक धर्म के दुष्ट रोगों में फँस गई थी। मुझे मासिकधर्म खुल कर न आता था। अगर आता था तो बहुत कम और दर्द के साथ जिससे बड़ा दुःख होता था। सफेद पानी (श्वेत प्रदर) अधिक जाने के कारण मैं प्रतिदिन कमजोर होती जा रही थी, चेहरे का रङ्ग पीला पड़ गया था, घर के कामकाज से जी घबराता था, हर समय सिर चकराता, कमर दर्द करती और शरीर टूटता रहता था। मेरे पतिदेव ने मुझे सैकड़ों रुपये की मशहूर औषधियाँ सेवन कराईं; परन्तु किसी से भी रत्ती भर लाभ न हुआ। इसी प्रकार मैं लगातार दो वर्ष तक बड़ा दुःख उठाती रही। सौभाग्य से एक संन्यासी महात्मा हमारे दरवाजे पर भिक्षा के लिये आये। मैं दरवाजे पर आटा डालने आई तो महात्मा जी ने मेरा मुख देख कर कहा—बेटी, तुझे क्या रोग है जो इस आयु में ही चेहरे का रङ्ग रुई की भाँति सफेद हो गया है ? मैंने सारा हाल कह सुनाया। उन्होंने मेरे पतिदेव को अपने डेरे पर बुलाया और उनको एक नुस्खा बतलाया, जिसके केवल १५ दिन के सेवन करने से ही मेरे तमाम गुप्त रोगों का नाश हो गया। ईश्वर की कृपा से अब मैं कई बच्चों की माँ हूँ। मैंने इस नुस्खे से अपनी सैकड़ों बहिनों को अच्छा किया है और कर रही हूँ। अब मैं इस अद्भुत औषधि को अपनी दुःखी बहिनों की भलाई के लिये असल लागत पर बाँट रही हूँ। इसके द्वारा मैं लाभ उठाना नहीं चाहती क्योंकि ईश्वर ने मुझे बहुत कुछ दे रखा है।

यदि कोई बहिन इस दुष्ट रोग में फँस गई हों तो वह मुझे जरूर लिखें। मैं उनको अपने हाथ से औषधि बना कर वी० पी० पार्सल द्वारा भेज दूँगी। एक बहिन के लिये पन्द्रह दिन की दवा तैयार करने पर २॥=) दो रुपया चौदह आने असल लागत खर्च होता है और महसूल डाक अलग है।

जरूरी सूचना—मुझे केवल स्त्रियों की इस दवा का नुस्खा मालूम है। इसलिये कोई बहिन मुझे और किसी रोग की दवा के लिये न लिखें।

प्रेमप्यारी अग्रवाल, (नं० ६०) बुढलाडा, जिला हिसार, (पञ्जाब)

Registered No. A—691

नारी का अधिकार

मुगल चित्रकला के सूक्ष्म सौन्दर्य और शालीनता के आवरण में गृहिणी रूप में नारी की जिस महिमान्वित मूर्ति का विकाश हुआ है, वह हमें परम प्रिय और श्रद्धेय है। इस युग में पड़ोस की महिलायें जब आपके घर आती हैं तब उन्हें चाय पिलाने में भी वही महिमा और सौन्दर्य प्रकट होता है। आपलोगों की खुले दिल की बातचीत में चाय से ही सौन्दर्य व सुरुचि का भाव आता है। जब आप सब इकट्ठी होती हैं तब चाय ही अंतरंगता की लहर ला देती है। इसीलिये महिला-जगत में चाय आज इतनी प्रिय है। सखी-सहेलियाँ जब आप के घर आँय तो चाय पिलाकर उन्हें तृप्त किया कीजिये।

★

"नित्य कर्म" नामक हमारी सचित्र पुस्तिका पढ़कर देखिये, दैनिक जीवन में चाय का स्थान कितना ऊँचा है। इस विज्ञापन को काट, अपना नाम और पता साफ-साफ लिखकर, कमिश्नर फौर इण्डिया, इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्ड, पोस्ट बक्स नम्बर २१७२ कलकत्ता के पते पर भेज दीजिये। पुस्तिका की एक प्रति आपको बिना-मूल्य भेज दी जायगी।
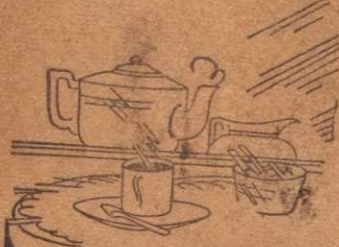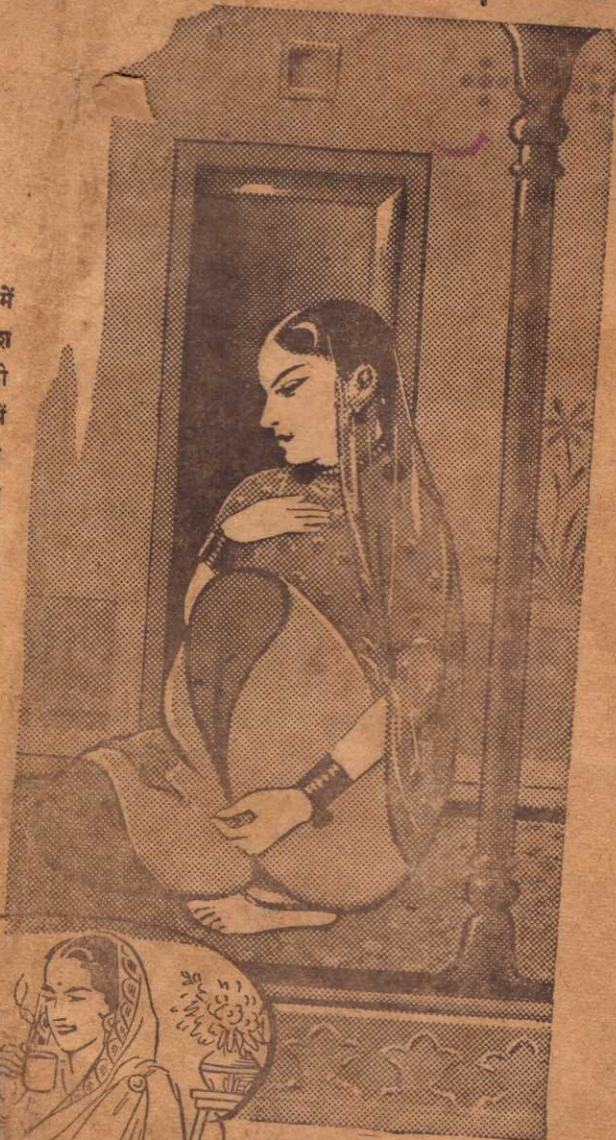
इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्ड द्वारा प्रचारित

IK 205

Printed and published by Shrinath Sin... ...Didi Press Katra, Allahabad.